

रामचरित्मानस

बालकाण्ड

पृथ्वी और देवतादि की करुण पुकार

चौपाई :

*** बाढ़े खल बहु चोर जुआरा। जे लंपट परधन परदारा॥ मानहिं मातु पिता नहिं देवा। साधुन्ह सन करवावहिं सेवा॥1॥

भावार्थ:

-पराए धन और पराई स्त्री पर मन चलाने वाले, दुष्ट, चोर और जुआरी बहुत बढ़ गए। लोगमाता-पिता और देवताओं को नहीं मानते थे और साधुओं (की सेवा करना तो दूर रहा, उल्टे उन) से सेवा करवाते थे॥1॥

*** जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सब प्रानी॥ अतिसय देखि धर्म कै ग्लानी। परम सभित धरा अकुलानी॥2॥

भावार्थ:

-(श्री शिवजी कहते हैं कि-) हे भवानी! जिनके ऐसे आचरण हैं, उन सब प्राणियों को राक्षस ही समझना। इस प्रकार धर्म के प्रति (लोगों की) अतिशय ग्लानि (अरुचि, अनास्था) देखकर पृथ्वी अत्यन्त भयभीत एवं व्याकुल हो गई॥2॥

*** गिरि सरि सिंधु भार नहिं मोही। जस मोहि गरुअ एक परद्रोही। सकल धर्म देखइ बिपरीता। कहि न सकइ रावन भय भीता॥3॥

भावार्थ:

-(वह सोचने लगी कि) पर्वतों, नदियों और समुद्रों का बोझ मुझे इतना भारी नहीं जान पड़ता, जितना भारी मुझे एक परद्रोही (दूसरों का अनिष्ट करने वाला) लगता है। पृथ्वी सारे धर्मों को विपरीत देख रही है, पर रावण से भयभीत हुई वह कुछबोल नहीं सकती॥3॥

***धेनु रूप धरि हृदयँ बिचारी। गई तहाँ जहाँ सुर मुनि झारी॥ निज संताप सुनाएसि रोई। काहू तँ कछु काज न होई॥4॥

भावार्थ:

-(अंत में) हृदय में सोच-विचारकर, गो का रूप धारण कर धरती वहाँ गई, जहाँ सब देवता और मुनि (छिपे) थे। पृथ्वी ने रोककर उनको अपना दुःख सुनाया, पर किसी से कुछ काम न बना॥4॥

छन्द :

*** सुर मुनि गंधर्वा मिलि करि सर्वांगे बिरंचि के लोका। सँग गोतनुधारी भूमि बिचारी परम बिकल भय सोका॥ ब्रह्माँ सब जाना मन अनुमाना मोर कछु न बसाई। जा करि तैं दासी सो अबिनासी हमरेउ तोर सहाई॥

भावार्थ:

-तब देवता, मुनि और गंधर्व सब मिलकर ब्रह्माजी के लोक (सत्यलोक) को गए। भय और शोक से अत्यन्त व्याकुल बेचारी पृथ्वी भी गो का शरीर धारण किए हुए उनके साथ थी। ब्रह्माजी सब जान गए। उन्होंने मन में अनुमान किया कि इसमें मेरा कुछ भी वश नहीं चलने का। (तब उन्होंने पृथ्वी से कहा कि-) जिसकी तू दासी है, वही अविनाशी हमारा और तुम्हारा दोनों का सहायक है॥

सोरठा :

*** धरनि धरहि मन धीर कह बिरंचि हरि पद सुमिरु। जानत जन की पीर प्रभु भंजिहि दारुन बिपत्ति॥184॥

भावार्थ:

-ब्रह्माजी ने कहा- हे धरती! मन में धीरज धारण करके श्री हरि के चरणों का स्मरण करो। प्रभु अपने दासों की पीड़ा को जानते हैं, वे तुम्हारी कठिन विपत्ति का नाश करेंगे॥184॥

चौपाई :

*** बैठे सुर सब करहिं बिचारा। कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा॥ पुर बैकुंठ जान कह कोई। कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई॥1॥

भावार्थ:

-सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि प्रभु को कहाँ पावें ताकि उनके सामने पुकार(फरियाद) करें। कोई बैकुंठपुरी जाने को कहता था और कोई कहता था कि वही प्रभु क्षीरसमुद्र में निवास करते हैं॥1॥

*** जाके हृदयँ भगति जसि प्रीती। प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहिं रीती॥ तेहिं समाज गिरिजा में रहेऊँ। अवसर पाइ बचन एक कहेऊँ॥2॥

भावार्थ:

-जिसके हृदय में जैसी भक्ति और प्रीति होती है, प्रभु वहाँ (उसके लिए) सदा उसी रीति से प्रकट होते हैं। हे पार्वती! उस समाज में मैं भी था। अवसर पाकर मैंने एक बात कही-॥2॥

*** हरि ब्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम तैं प्रगट होहिं मैं जाना॥ देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं। कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं॥3॥

भावार्थ:

-मैं तो यह जानता हूँ कि भगवान सब जगह समान रूप से व्यापक हैं प्रेम से वे प्रकट हो जाते हैं,

देश, काल, दिशा, विदिशा में बताओ, ऐसी जगह कहाँ है, जहाँ प्रभु न हों॥3॥

*** अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी॥ मोर बचन सब के मन माना। साधु-साधु करि ब्रह्म बखाना॥4॥

भावार्थ:

-वे चराचरमय (चराचर में व्याप्त) होते हुए ही सबसे रहित हैं और विरक्त हैं(उनकी कहीं आसक्ति नहीं है), वे प्रेम से प्रकट होते हैं, जैसे अग्नि। (अग्नि अव्यक्त रूप से सर्वत्र व्याप्त है, परन्तु जहाँ उसके लिए अरणिमन्थनादि साधन किए जाते हैं, वहाँ वह प्रकट होती है। इसी प्रकार सर्वत्र व्याप्त भगवान भी प्रेम से प्रकट होते हैं।) मेरी बात सबको प्रिय लगी। ब्रह्माजी ने 'साधु-साधु' कहकर बड़ाई की॥4॥

दोहा :

*** सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर। अस्तुति करत जोरि कर सावधान मतिधीर॥185॥

भावार्थ:

-मेरी बात सुनकर ब्रह्माजी के मन में बड़ा हर्ष हुआ उनका तन पुलकित हो गया और नेत्रों से (प्रेम के) आँसू बहने लगे। तब वे धीरबुद्धि ब्रह्माजी सावधान होकर हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे॥185॥

छन्द :

*** जय जय सुरनायक जनसुखदायक प्रनतपाल भगवंता। गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुसुता प्रियकंता॥ पालन सुर धरनी अद्भुत करनी मरम न जानइ कोई। जो सहज कृपाला दीनदयाला करउ अनुग्रह सोई॥1॥

भावार्थ:

-हे देवताओं के स्वामी, सेवकों को सुख देने वाले, शरणागत की रक्षा करने वाले भगवान! आपकी जय हो! जय हो!! हे गो-ब्राह्मणों का हित करने वाले, असुरों का विनाश करने वाले, समुद्र की कन्या (श्री लक्ष्मीजी) के प्रिय स्वामी! आपकी जय हो! हे देवता और पृथ्वी का पालन करने वाले! आपकी लीला अद्भुत है, उसका भेद कोई नहीं जानता। ऐसे जो स्वभाव से ही कृपालु और दीनदयालु हैं, वे ही हम पर कृपा करें॥1॥

*** जय जय अबिनासी सब घट बासी ब्यापक परमानंदा। अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुंदा॥ जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगत मोह मुनिबुंदा। निसिबासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानंदा॥2॥

भावार्थ:

-हे अविनाशी, सबके हृदय में निवास करने वाले (अन्तर्यामी), सर्वव्यापक, परम आनंदस्वरूप, अज्ञेय, इन्द्रियों से परे, पवित्र चरित्र, माया से रहित मुकुंद (मोक्षदाता)! आपकी जय हो! जय हो!! (इस

लोक और परलोक के सब भोगों से) विरक्त तथा मोह से सर्वथा छूटे हुए (जानी) मुनिवृन्द भी अत्यन्त अनुरागी (प्रेमी) बनकर जिनका रात-दिन ध्यान करते हैं और जिनके गुणों के समूह का गान करते हैं, उन सच्चिदानंद की जय हो॥2॥

*** जेहिं सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा। सो करउ अघारी चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा॥ जो भव भय भंजन मुनि मन रंजन गंजन बिपति बरूथा। मन बच क्रम बानी छाड़ि सयानी सरन सकल सुरजूथा॥3॥

भावार्थ:

-जिन्होंने बिना किसी दूसरे संगी अथवा सहायक के अकेले ही (या स्वयं अपने को त्रिगुणरूप-ब्रह्मा, विष्णु, शिवरूप- बनाकर अथवा बिना किसी उपादान-कारण के अर्थात् स्वयं ही सृष्टि का अभिन्ननिमित्तोपादान कारण बनकर) तीन प्रकार की सृष्टि उत्पन्न की, वे पापों का नाश करने वाले भगवान हमारी सुधि लें। हम न भक्ति जानते हैं, न पूजा, जो संसार के (जन्म-मृत्यु के) भय का नाश करने वाले, मुनियों के मन को आनंद देने वाले और विपत्तियों के समूह को नष्ट करने वाले हैं। हम सब देवताओं के समूह, मन, वचन और कर्म से चतुराई करने की बान छोड़कर उन (भगवान) की शरण (आए) हैं॥3॥

*** सारद श्रुति सेषा रिषय असेषाजा कहूँ कोउ नहिं जाना। जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवउ सो श्रीभगवाना॥ भव बारिधि मंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा। मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पद कंजा॥4॥

भावार्थ:

-सरस्वती, वेद, शेषजी और सम्पूर्ण ऋषि कोई भी जिनको नहीं जानते, जिन्हें दीन प्रिय हैं, ऐसा वेद पुकारकर कहते हैं, वे ही श्री भगवान हम पर दया करें। हे संसार रूपी समुद्र के (मथने के) लिए मंदराचल रूप, सब प्रकार से सुंदर, गुणों के धाम और सुखों की राशि नाथ! आपके चरण कमलों में मुनि, सिद्ध और सारे देवता भय से अत्यन्त व्याकुल होकर नमस्कार करते हैं॥4॥ भगवान् का वरदान

दोहा :

*** जानि सभय सुर भूमि सुनि बचन समेत सनेह। गगनगिरा गंभीर भइ हरनि सोक संदेह॥186॥

भावार्थ:

-देवताओं और पृथ्वी को भयभीत जानकर और उनके स्नेहयुक्त वचन सुनकर शोक और संदेह को हरने वाली गंभीर आकाशवाणी हुई॥186॥

चौपाई :

*** जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा॥ अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेहउँ दिनकर बंस उदारा॥1॥

भावार्थ:

-हे मुनि, सिद्ध और देवताओं के स्वामियों! डरो मत। तुम्हारे लिए मैं मनुष्य का रूप धारण करूँगा और उदार (पवित्र) सूर्यवंश में अंशों सहित मनुष्य का अवतार लूँगा॥1॥

*** कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुँ मैं पूरब बर दीन्हा॥ ते दसरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरी प्रगट नर भूपा॥2॥

भावार्थ:

-कश्यप और अदिति ने बड़ा भारी तप किया था। मैं पहले ही उनको वर दे चुका हूँ। वे हीदशरथ और कौसल्या के रूप में मनुष्यों के राजा होकर श्री अयोध्यापुरी में प्रकट हुए हैं॥2॥

*** तिन्ह केँ गृह अवतरिहउँ जाई। रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई॥ नारद बचन सत्य सब करिहउँ। परम सक्ति समेत अवतरिहउँ॥3॥

भावार्थ:

-उन्हीं के घर जाकर मैं रघुकुल में श्रेष्ठ चार भाइयों के रूप में अवतार लूँगा। नारद के सब वचन में सत्य करूँगा और अपनी पराशक्ति के सहित अवतार लूँगा॥3॥

*** हरिहउँ सकल भूमि गरुआई। निर्भय होहु देव समुदाई॥ गगन ब्रह्मबानी सुनि काना। तुरत फिरे सुर हृदय जुझाना॥4॥

भावार्थ:

-मैं पृथ्वी का सब भार हर लूँगा। हे देववृंद! तुम निर्भय हो जाओ। आकाश में ब्रह्म (भगवान) की वाणी को कान से सुनकर देवता तुरंत लौट गए। उनका हृदयशीतल हो गया॥4॥

*** तब ब्रह्माँ धरनिहि समुझावा। अभय भई भरोस जियँ आवा॥5॥

भावार्थ:

-तब ब्रह्माजी ने पृथ्वी को समझाया। वह भी निर्भय हुई और उसके जी में भरोसा (ढाढस) आ गया॥5॥

दोहा :

*** निज लोकहि बिरंचि गे देवन्ह इहइ सिखाइ। बानर तनु धरि धरि महि हरि पद सेवहु जाइ॥187॥

भावार्थ:

-देवताओं को यही सिखाकर कि वानरों का शरीर धर-धरकर तुम लोग पृथ्वी पर जाकर भगवान के चरणों की सेवा करो, ब्रह्माजी अपने लोक को चले गए॥187॥

चौपाई :

*** गए देव सब निज निज धामा। भूमि सहित मन कहुँ बिश्रामा॥ जो कछु आयसु ब्रह्माँदीन्हा। हरषे देव बिलंब न कीन्हा॥1॥

भावार्थ:

-सब देवता अपने-अपने लोक को गए। पृथ्वी सहित सबके मन को शांति मिली। ब्रह्माजी ने जो कुछ आज्ञा दी, उससे देवता बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने (वैसा करने में) देर नहीं की॥1॥

***बनकर देह धरी छिति माहीं। अतुलित बल प्रताप तिन्ह पाहीं॥ गिरि तरु नख आयुध सब बीरा। हरि मारग चितवहिं मतिधीरा॥2॥

भावार्थ:

-पृथ्वी पर उन्होंने वानरदेह धारण की। उनमें अपार बल और प्रताप था। सभी शूरवीर थे, पर्वत, वृक्ष और नख ही उनके शस्त्र थे। वे धीर बुद्धि वाले (वानर रूप देवता) भगवान के आने की राह देखने लगे॥2॥ राजा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ, रानियों का गर्भवती होना

*** गिरि कानन जहँ तहँ भरि पूरी। रहे निज निज अनीक रचि रूरी॥ यह सब रुचिर चरित में भाषा। अब सो सुनहु जो बीचहिं राखा॥3॥

भावार्थ:

-वे (वानर) पर्वतों और जंगलों में जहाँ-तहाँ अपनी-अपनी सुंदर सेना बनाकर भरपूरछा गए। यह सब सुंदर चरित्र मैंने कहा। अब वह चरित्र सुनो जिसे बीच ही में छोड़ दिया था॥3॥

*** अवधपुरी रघुकुलमनि रऊ। बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊँ॥ धरम धुरंधर गुननिधि ग्यानी। हृदयँ भगति भति सारंगपानी॥4॥

भावार्थ:

-अवधपुरी में रघुकुल शिरोमणिदशरथ नाम के राजा हुए जिनका नाम वेदों में विख्यात है। वे धर्मधुरंधर, गुणों के भंडार और जानी थे। उनके हृदय में शांतिधनुष धारण करने वाले भगवान की भक्ति थी और उनकी बुद्धि भी उन्हीं में लगी रहती थी॥4॥

दोहा :

*** कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत। पति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि पद कमल बिनीत॥188॥

भावार्थ:

-उनकी कौसल्या आदि प्रिय रानियाँ सभी पवित्र आचरण वाली थीं। वे (बड़ी) विनीत और पति के अनुकूल (चलने वाली) थीं और श्री हरि के चरणकमलों में उनका दृढ़ प्रेम था॥188॥

चौपाई :

*** एक बार भूपति मन माहीं। भै गलानि मोरें सुत नाहीं॥ गुर गृह गयउ तुरत महिपाला। चरन लागि करि बिनय बिसाला॥1॥

भावार्थ:

-एक बार राजा के मन में बड़ी ग्लानि हुई कि मेरे पुत्र नहीं है। राजा तुरंत ही गुरु के घर गए और चरणों में प्रणाम कर बहुत विनय की॥॥

*** निज दुख सुख सब गुरहि सुनायउ। कहि बसिष्ठ बहु बिधि समुझायउ॥ धरहु धीर होइहहिं सुत

चारी। त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी॥2॥

भावार्थ:

-राजा ने अपना सारा सुख-दुःख गुरु को सुनाया। गुरु वशिष्ठजी ने उन्हें बहुतप्रकार से समझाया (और कहा-) धीरज धरो, तुम्हारे चार पुत्र होंगे, जो तीनों लोकों में प्रसिद्ध और भक्तों के भय को हरने वाले होंगे॥2॥

*** सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा। पुत्रकाम सुभ जग्य करावा॥ भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें। प्रगटे अग्नि चरु कर लीन्हें॥3॥

भावार्थ:

-वशिष्ठजी ने श्रृंगी ऋषि को बुलवाया और उनसे शुभ पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया। मुनि के भक्ति सहित आहुतियाँ देने पर अग्निदेव हाथ में चरु (हविष्यान्न खीर) लिए प्रकट हुए॥3॥

दोहा :

***जो बसिष्ठ कछु हृदयँ बिचारा। सकल काजु भा सिद्ध तुम्हारा॥ यह हबि बाँटि देहु नृप जाई। जथा जोग जेहि भाग बनाई॥4॥

भावार्थ:

-(और दशरथ से बोले-) वशिष्ठ ने हृदय में जो कुछ विचारा था, तुम्हारा वह सब काम सिद्ध हो गया। हे राजन्! (अब) तुम जाकर इस हविष्यान्न (पायस) को, जिसको जैसा उचित हो, वैसा भाग बनाकर बाँट दो॥4॥

दोहा :

*** तब अदृश्य भए पावक सकल सभहि समुझाई। परमानंद मगन नृप हरष न हृदयँ समाइ॥189॥

भावार्थ:

-तदनन्तर अग्निदेव सारी सभा को समझाकर अन्तर्धान हो गए। राजा परमानंद में मग्न हो गए, उनके हृदय में हर्ष समाता न था॥189॥

चौपाई :

*** तबहिं रायँ प्रिय नारि बोलाई। कौसल्यादि तहाँ चलि आई॥ अर्ध भाग कौसल्यहि दीन्हा। उभय भाग आधे कर कीन्हा॥1॥

भावार्थ:

-उसी समय राजा ने अपनी प्यारी पत्नियों को बुलाया। कौसल्या आदि सब (रानियाँ) वहाँ चली आईं। राजा ने (पायस का) आधा भाग कौसल्या को दिया, (और शेष) आधे के दो भाग किए॥1॥

*** कैकेई कहँ नृप सो दयऊ। रहयो सो उभय भाग पुनि भयऊ॥ कौसल्या कैकेई हाथ धरि। दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि॥2॥

भावार्थ:

-वह (उनमें से एक भाग) राजा ने कैकेयी को दिया। शेष जो बच रहा उसके फिर दो भाग हुए और राजा ने उनको कौसल्या और कैकेयी के हाथ पर रखकर (अर्थात् उनकी अनुमति लेकर) और इस प्रकार उनका मन प्रसन्न करके सुमित्रा को दिया॥2॥

*** एहि बिधि गर्भसहित सब नारी। भई हृदयँ हरषित सुख भारी॥ जा दिन तँ हरि गर्भहिं आए। सकल लोक सुख संपति छाए॥3॥

भावार्थ:

-इस प्रकार सब स्त्रियाँ गर्भवती हुईं। वे हृदय में बहुत हर्षित हुईं। उन्हें सुख मिला। जिस दिन से श्री हरि (लीला से ही) गर्भ में आए, सब लोकों में सुख और सम्पत्ति छा गई॥3॥

*** मंदिर महँ सब राजहिं रानीं। सोभा सील तेज की खानीं॥ सुख जुत कछुक काल चलि गयऊ। जेहिं प्रभु प्रगट सो अवसर भयऊ॥4॥

भावार्थ:

-शोभा, शील और तेज की खान (बनी हुई) सब रानियाँ महल में सुशोभित हुईं। इस प्रकारकुछ समय सुखपूर्वक बीता और वह अवसर आ गया, जिसमें प्रभु को प्रकट होना था॥4॥ श्री भगवान् का प्राकट्य और बाललीला का आनंद

दोहा :

*** जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल। चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुखमूल॥190॥

भावार्थ:

-योग, लगन, ग्रह, वार और तिथि सभी अनुकूल हो गए। जड़ और चेतन सब हर्ष से भर गए। (क्योंकि) श्री राम का जन्म सुख का मूल है॥190॥

चौपाई :

*** नौमी तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता॥ मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक बिश्रामा॥1॥

भावार्थ:

-पवित्र चैत्र का महीना था, नवमी तिथि थी। शुक्ल पक्ष और भगवान का प्रिय अभिजित् मुहूर्त था। दोपहर का समय था। न बहुत सर्दी थी न धूप (गरमी) थी। वह पवित्र समय सब लोकों को शांति देने वाला था॥1॥

*** सीतल मंद सुरभि बह बाऊ। हरषित सुर संतन मन चाऊ॥ बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा॥ सवहिं सकल सरिताऽमृतधारा॥2॥

भावार्थ:

-शीतल, मंद और सुगंधित पवन बह रहा था। देवता हर्षित थे और संतों के मन में (बड़ा) चाव था। वन फूले हुए थे पर्वतों के समूह मणियों से जगमगा रहे थे और सारी नदियाँ अमृत की धारा

बहा रही थीं॥2॥

*** सो अवसर बिरंचि जब जाना। चले सकल सुर साजि बिमाना॥ गगन बिमल संकुल सुर जूथा। गावहिं गुन गंधर्ब बरूथा॥3॥

भावार्थ:

-जब ब्रह्माजी ने वह (भगवान के प्रकट होने का) अवसर जाना तब (उनके समेत) सारे देवता विमान सजा-सजाकर चले। निर्मल आकाश देवताओं के समूहों से भर गया। गंधर्वों के दल गुणों का गान करने लगे॥3॥

*** बरषहिं सुमन सुअंजुलि साजी। गहगहि गगन दुंदुभी बाजी॥ अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा। बहु बिधि लावहिं निज निज सेवा॥4॥

भावार्थ:

-और सुंदर अंजलियों में सजा-सजाकर पुष्प बरसाने लगे। आकाश में घमाघम नगाड़े बजने लगे। नाग, मुनि और देवता स्तुति करने लगे और बहुत प्रकार से अपनी-अपनी सेवा (उपहार) भेंट करने लगे॥4॥

दोहा :

*** सुर समूह बिनती करि पहुँचे निज निज धाम। जगनिवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक बिश्राम॥191

भावार्थ:

-देवताओं के समूह विनती करके अपने-अपने लोक में जा पहुँचे। समस्त लोकों को शांति देने वाले, जगदाधार प्रभु प्रकट हुए॥91॥

छन्द :

*** भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी। हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी॥ लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुजचारी। भूषणबनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥1॥

भावार्थ:

-दीनों पर दया करने वाले, कौसल्याजी के हितकारी कृपालु प्रभु प्रकट हुए। मुनियों के मन को हरने वाले उनके अद्भुत रूप का विचार करके माता हर्ष से भर गई। नेत्रों को आनंद देने वाला मेघ के समान श्याम शरीर था, चारों भुजाओं में अपने (खास) आयुध (धारण किए हुए) थे, (दिव्य) आभूषण और वनमाला पहने थे, बड़े-बड़े नेत्र थे। इस प्रकार शोभा के समुद्र तथा खर राक्षस को मारने वाले भगवान प्रकट हुए॥॥

*** कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता। माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥ करुना सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता। सो मम हित लागीजन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥2॥

भावार्थ:

-दोनों हाथ जोड़कर माता कहने लगी- हे अनंत! मैं किस प्रकार तुम्हारी स्तुति करूँ। वेद और पुराण तुमको माया, गुण और ज्ञान से परे और परिमाण रहित बतलाते हैं। श्रुतियाँ और संतजन दया और सुख का समुद्र सब गुणों का धाम कहकर जिनका गान करते हैं, वही भक्तों पर प्रेम करने वाले लक्ष्मीपति भगवान मेरे कल्याण के लिए प्रकट हुए हैं॥2॥

*** ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै। मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै॥ उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै। कहे कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥3॥

भावार्थ:

-वेद कहते हैं कि तुम्हारे प्रत्येक रोम में माया के रचे हुए अनेकों ब्रह्माण्डोंके समूह (भरे) हैं। वे तुम मेरे गर्भ में रहे- इस हँसी की बात के सुनने पर धीर (विवेकी) पुरुषों की बुद्धि भी स्थिर नहीं रहती (विचलित हो जाती है)। जब माता को ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब प्रभु मुस्कुराए। वे बहुत प्रकार के चरित्र करना चाहते हैं। अतः उन्होंने (पूर्व जन्म की) सुंदर कथा कहकर माताको समझाया, जिससे उन्हें पुत्र का (वात्सल्य) प्रेम प्राप्त हो (भगवान के प्रति पुत्र भाव हो जाए)॥3॥

*** माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तातयह रूपा। कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥ सुनि बचन सुजानारोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा। यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥4॥

भावार्थ:

-माता की वह बुद्धि बदल गई, तब वह फिर बोली- हे तात! यह रूप छोड़कर अत्यन्त प्रिय बाललीला करो, (मेरे लिए) यह सुख परम अनुपम होगा। (माता का) यह वचन सुनकर देवताओं के स्वामी सुजान भगवान ने बालक (रूप) होकर रोना शुरू कर दिया। (तुलसीदासजी कहते हैं-) जो इस चरित्र का गान करते हैं, वे श्री हरि का पद पाते हैं और (फिर) संसार रूपी कूप में नहीं गिरते॥4॥

दोहा :

*** बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार। निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥192॥

भावार्थ:

-ब्राह्मण, गो, देवता और संतों के लिए भगवान ने मनुष्य का अवतार लिया। वे (अज्ञानमयी, मलिना) माया और उसके गुण (सत्, रज, तम) और (बाहरी तथा भीतरी) इन्द्रियों से परे हैं। उनका (दिव्य) शरीर अपनी इच्छा से ही बना है (किसी कर्म बंधन से परवश होकर त्रिगुणात्मक भौतिक पदार्थों के द्वारा नहीं)॥192॥ [अगला पेज...](#)

रामचरित्मानस

बालकाण्ड